प्राक्कथन

यह षट्खंडागमका पन्द्रहवाँ भाग प्रस्तुत है। इसके पश्चात् शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाले सोलहवें भागमें इस ग्रन्थराजकी परिसमाप्ति हो जावेगी।

इन दोनों भागोंकी रचना ध्यान देनेयोय है। अग्रायणीय पूर्वके चयनलब्धि अधिकार के अन्तर्गत कर्मप्रकृतिप्राभृतके कृति, वेदना आदि चौबीस अनुयोगद्वारोंमें प्रथम छहपर ही भूतबलि स्वामी कृत सूत्र पाये जाते हैं। शेष अठारह अधिकारों पर सूत्र रचना नहीं पायी जाती । इनकी पूर्ति धवलाकार श्री वीरसेन स्वामीने की है। इन शेष अठारह अनुयोगद्वारोंमें प्रथम चार अर्थात् निबन्धन, प्रक्रम, उपक्रम और उदय की प्ररूपणा प्रस्तुत भागमें की गयी है। शेष मोक्ष, संक्रम आदि चौदह अनुयोगद्वारोंका प्ररूपण अन्तिम भागमें प्रकाशित होगा।

इन चौबीस अनुयोगद्वारोंके मूल स्त्रोतका जो उल्लेख धवलाकारने किया है उससे हम महावीर भगवानके गणधरों द्वारा रचित द्वादशांगके भीतर पूर्वोके विषय व विस्तारका कुछ सुस्पष्ट विचार प्राप्त होता है। चौदह पूर्वोमें द्वितीय पूर्वका नाम था अग्रायणीय, जिसके पूर्वान्त, अपरान्त आदि १४ अधिकारोंमें से पाँचवें अधिकारका नाम था चयनलब्धि। इसके बीस पाहुड थे जिनमें चतुर्थ पाहुड़ का नाम था कर्मप्रकृति। इसी प्रकृतिके कृति , वेदना आदि अल्पबहुतपर्यन्त वे चौबीस अनुयोगद्वार थे जिनकी संक्षेप प्ररूपणा षट्खंडागमके वेदना, वर्गणा, खुद्दाबंध और महाबंध इन चार खंडोंमें पायी जाती है। (देखिये प्रथम भागकी प्रस्तावना, पृ. ७२) इन अनुयोगद्वारोंके मूल पाठका ज्ञान परम्परानुसार तो अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहुके पश्चात् नष्ट हो गया था। तथापि कुछ खंडोंका ज्ञान तो धरसेन स्वामीको भी था जिसका उपदेश उन्होंने पुष्पदन्त और भूतबलि आचार्योंको दिया था। किन्तु धवला टीकाके रचयिता स्वामी वीरसेनने कहीं कहीं ऐसे उल्लेख किये हैं जिनसे प्रतीत होता है कि उनके समयतक भी पूर्वोके मूल पाठ सर्वथा नष्ट नहीं हुए थे। उदाहरणार्थ, प्रस्तुत भागमें ही अकरणोपशामनाकी प्ररूपणा करते हुए उन्होंने कहा है कि "कर्मप्रवाद नामक आठवें पूर्वमें सब कर्मोकी मूल व उत्तर प्रकृतियोंके द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार विपाक और अविपाक पर्यायोंका वर्णन खूब विस्तारसे किया गया है, वहाँ उसे देख लेना चाहिए।" (पृ. २७५) यदि आचार्योंके समयमें उक्त मूल रचना उपलब्ध न होती तो 'इस प्रकरणको वहाँ देख लेना चाहिये' यह कहनेका कोई अर्थ नहीं रहता।

दूसरे, भूतबलि आचार्यके सूत्र न रहनेपर भी उन्होंने शेष अठारह अधिकारोंकी प्ररूपणा की है उसका कुछ आधार तो उनके सन्मुख रहा ही होगा। जिस विषयपर उन्हें कोई आधार नही मिला वहाँ उन्होंने स्पष्ट कह दिया है कि इसका कोई उपदेश प्राप्त नहीं है। (देखिये पृ. ८१, २१६ आदि)।

इस भागके साथ प्रस्तुत चार अनुयोगों पर जो 'पंजिका' नामक टीका प्राप्त हुई है वह भी प्रकाशित की जा रही है। उसकी उत्थानिकासे ऐसा प्रतीत होता है कि वह समस्त शेष अठारह अनुयोगद्वारोंपर लिखी गयी है। किन्तु जो प्रति मूडबिद्रीसे महाबंधकी प्रति के साथ प्राप्त हुई है वह केवल इन्हीं चार अनुयोगद्वारों पर है। शेषकी खोज करना आवश्यक प्रतीत होता है।

गंथ संपादन व प्रकाशनमें श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी, उनके सुपुत्र राजेन्द्रकुमारजी, पं. नाथूरामजी प्रेमी, श्री. रतनचंदजी, नेमचंदजी तथा मेरे सहयोगियोंका साहाय्य पूर्ववत् चला आ रहा है जिसके लिए मैं उनका अनुगृहीत हूँ।

प्राकृत जैन विद्यापीठ
मुजफ्फरपुर, बिहार
१८-४-५७

हीरालाल जैन
(डायरेक्टर, प्राकृत जैन विद्यापीठ, वैशाली)